



Neutral Citation
2019:CGHC:11214

1

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर
द्वितीय अपील संख्या 100/2001
19.03.2019 को निर्णय सुरक्षित
09.04.2019 को निर्णय पारित

1. बारात राम पिता नीलाम्बर, उम्र लगभग 55 वर्ष
2. जीतराम पिता नीलाम्बर उम्र करीब 48 वर्ष
3. श्रीमती सेवती कुवंर (मृतक) विधिक प्रतिनिधि
3 ए- श्रीमती मोहरमती पटले, पिता स्वर्गीय श्री पुरंजनलाल पति श्री पदमलोचन, उम्र 60 वर्ष, निवासी ग्राम हड़हा, पोस्ट- खुर्सी, तहसील पामगढ़, जिला जांजगीर-चांपा (छ.ग.)
3 बी- श्रीमती द्रोपती पटेल पिता स्वर्गीय पुरंजलाल, पति स्वर्गीय दयाराम पटेल, उम्र लगभग 58 वर्ष, निवासी ग्राम- खैरा, पोस्ट जयराम नगर, तहसील मस्तूरी, जिला. बिलासपुर (छ.ग.)
3 सी- श्रीमती गंगा पटेल, पिता स्वर्गीय पुरंजलाल, पति श्री परसराम पटेल, उम्र लगभग 56 वर्ष, निवासी बेदपरसदा, पोस्ट व तहसील मस्तूरी, जिला. बिलासपुर (छ.ग.)
3 डी- श्रीमती कुमारी पटेल, पिता स्वर्गीय पुरंजलाल, पति श्री रामचरण पटेल, उम्र लगभग 54 वर्ष, निवासी ग्राम फरहदा, पोस्ट-दल्हा पोंडी, तहसील अकलतरा, जिला. बिलासपुर (छ.ग.)
4. राजकुमार, पिता पुरंजनलाल, उम्र लगभग 20 वर्ष।
सभी निवासी ग्राम हड़हा तहसील जांजगीर, जिला- जांजगीर-चांपा, छत्तीसगढ़
-----अपीलकर्ता/प्रतिवादी
बनाम
महादेव (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि
1. श्रीमती फूल बाई (विलोपित)
2. राधे श्याम, पिता महादेव, उम्र लगभग 50 वर्ष
3. श्याम सुन्दर, पिता महादेव, उम्र लगभग 47 वर्ष
4. छोटेलाल पिता महादेव, उम्र लगभग 11 वर्ष
5. कमलेश, पिता महादेव, उम्र लगभग 35 वर्ष
6. सोहन पिता महादेव, उम्र लगभग 33 वर्ष
प्रतिवादी संख्या 1 से 6 निवासी ग्राम लोहारसी, तह. पाम गर्ज, जिला. जांजगीर (चांपा).
7. श्रीमती शंकुतला, पिता महादेव, उम्र लगभग 43 वर्ष पति प्रताप कोका, निवासी अफ पोट-सारंगढ़, जिला रायगढ़.
8. श्रीमती सहोदरा यादव, पिता महादेव, उम्र लगभग 42 वर्ष, पति अमर नाथ यादव, निवासी सिवनी (नैला), जिला जांजगीर (चांपा).
9. श्रीमती सुमित्रा यादव, पिता महादेव, उम्र लगभग 39 वर्ष, - पति राम प्रसाद यादव, निवासी ग्राम- पुरा, जिला. जांजगीर (चांपा) रखना
10. श्रीमती सुशीला यादव, पिता महादेव, उम्र लगभग 37 वर्ष वर्ष, द्वारा- पति किशोर यादव, निवासी ग्राम लिबरा, तह. चार घोरा, जिला. रायगढ़ (छ.ग.)
11. श्रीमती उषा यादव (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि ।
11-ए अवधेश कुमार यादव, उषा यादव पिता स्व श्री हरिचरण यादव, उम्र लगभग 50 वर्ष, निवासी ग्राम एवं पद- तागा, तहसील एवं जिला जांजगीर (चांपा) (छ.ग.)
11-बी गजेन्द्र यादव पिता अवधेश कुमार उम्र लगभग 14 वर्ष,
11-सी देवेन्द्र यादव पिता अवधेश कुमार उम्र लगभग 11 साल.



Neutral Citation
2019:CGHC:11214

- 2
- प्रतिवादी क्रमांक 11-बी एवं सी अपने पिता नाबालिग हैं –अवधेश, पिता श्री हरिचरण यादव, निवासी ग्राम व पोस्ट- टैगा, तहसील एवं जिला जांजगीर (चांपा) (छ.ग.)
12. श्रीमती संतोषी यादव, पिता महादेव, उम्र लगभग 30 वर्ष, पति सुनील कुमार यादव, निवासी खरौद नगर, जिला जांजगीर (चांपा)

-----उत्तरवादी/वादी

अपीलकर्ताओं/प्रतिवादियों के लिए: श्री प्रफुल्ल भारत और श्री आर.एस. पटेल, अधिवक्तागण
उत्तरवादियों/वादी के विधिक प्रतिनिधि के लिए: श्री राजीव श्रीवास्तव और श्री मलय श्रीवास्तव, अधिवक्तागण

माननीय श्री न्यायमूर्ति संजय के. अग्रवाल
सी.ए.वी. निर्णय

(1) प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत यह द्वितीय अपील निम्नलिखित विधिक प्रश्न पर विचारार्थ स्वीकार की गई है:-

“1. क्या प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय के निर्णय एवं डिक्ली को पलटना न्यायोचित है, जिसमें यह माना गया है कि वादी यह घोषित करने का हकदार है कि वह वाद भूमि का स्वामी है तथा अभिलेख पर मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों को नजरअंदाज करते हुए कब्जे का हकदार है?

2. क्या प्रकरण के तथ्यों के आधार पर, विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 26 में निहित प्रावधानों के दृष्टिकोण में बिक्री विलेख में सुधार के लिए वाद के अभाव में स्वामित्व एवं कब्जे की घोषणा के लिए वादी का वाद अनुरक्षणीय था तथा प्रतिवादियों द्वारा मौखिक साक्ष्य भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 92 के प्रावधान (1) के अधीन संविदा की अभिव्यक्ति में गलती साबित करने के लिए स्वीकार्य है? ”

[सुविधा के लिए, पक्षों को विचारण न्यायालय में उनकी स्थिति के अनुसार संदर्भित किया जाएगा]

(2) इस अपील के निर्णय के लिए ध्यान देने योग्य आवश्यक तथ्य निम्नानुसार हैं:-

(2.1) मूल वादी - महादेव ने प्रतिवादियों के विरुद्ध स्वामित्व की घोषणा और कब्जे की वसूली के लिए वाद दायर किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा कि वह खसरा क्रमांक 273/1, 273/3 और 273/4, कुल क्षेत्रफल 6.60 एकड़, ग्राम - हड़हा, तहसील - जांजगीर चांपा, जिला-जांजगीर चांपा में स्थित वाद भूमि का स्वामित्व धारक है। वादी का मामला यह है कि चार प्रतिवादियों ने वाद भूमि पर जबरन कब्जा कर लिया और 7.11.1981 को वाद भूमि पर खड़ी फसलों की कटाई की और उसके खिलाफ झूठी शिकायत भी दर्ज कराई। उन्होंने आगे दलील दी कि राजस्व अभिलेखों (प्रदर्श पी-9 और पी-10) में बेदखली की तिथि तक वादी का नाम दर्ज है और उसके बाद प्रतिवादियों ने स्थानीय राजस्व अधिकारियों के साथ मिलीभगत करके राजस्व अभिलेखों में अपना नाम दर्ज करा लिया, इस प्रकार वादी दावे वाली भूमि पर स्वामित्व की घोषणा और कब्जे की वसूली का हकदार है।



Neutral Citation
2019:CGHC:11214

3

(2.2) प्रतिवादी संख्या 1 और 2 ने संयुक्त लिखित बयान दाखिल किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा गया कि वादी ने मुकदमे की भूमि प्रतिवादी संख्या 1 और 2 अर्थात् बरतराम और अजीतराम तथा उनके भाई पूरंजन (अब उनके कानूनी प्रतिनिधि मुकदमे में विचारण न्यायालय के समक्ष प्रतिवादी संख्या 3 और 4 के रूप में अभियोजित हैं) को 19.4.1971 को (प्रदर्श डी/4) ₹41,500/- के नकद प्रतिफल पर बेची है, लेकिन मुद्रण त्रुटि के कारण मुकदमे की भूमि का खसरा नंबर अंकित नहीं किया गया, लेकिन प्रतिफल राशि वादी को दे दी गई है और मुकदमे की भूमि पर उनका कब्जा है, इस प्रकार प्रकरण निरस्त किए जाने योग्य है।

(2.3) विचारण न्यायालय ने दो अतिरिक्त विवादकों के साथ चार विवादक तय किए और दिनांक 11.4.1997 के निर्णय और डिक्री के अधीन इस आधार पर प्रकरण निरस्त कर दिया कि वादी यह साबित करने में विफल रहा है कि उसने प्रतिवादी संख्या 1 और 2 और उनके भाई पूरंजन को प्रकरण भूमि नहीं बेची है और यह भी साबित करने में विफल रहा कि प्रतिवादियों ने मुकदमे की भूमि पर अवैध कब्जा कर रखा है।

(2.4) वादी ने व्य. प्र. सं. की धारा 96 के अधीन प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष पहली अपील की। पहली अपील के लंबित रहने के दौरान, प्रतिवादियों ने 9.7.89 को अपने लिखित बयान में संशोधन करते हुए दलील दी कि वादी को बिक्री विलेखों में सुधार करने के लिए निर्देशित किया जाए और परिणामस्वरूप, वादी ने भी अपने वाद में संशोधन किया और पैरा 5 (ए) जोड़ा कि उसने प्रतिवादी संख्या 1 और 2 और पूरंजन के पक्ष में मुकदमे की भूमि हस्तांतरित नहीं की है। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने दिनांक 17.1.2001 के आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री द्वारा विचारण न्यायालय के निर्णय एवं डिक्री को निरस्त कर दिया तथा मुकदमे पर निर्णय सुनाया, जिसके विरुद्ध प्रतिवादियों द्वारा सी.पी.सी. की धारा 100 के अन्तर्गत यह द्वितीय अपील प्रस्तुत की गई है, जिसमें विधि के महत्वपूर्ण प्रश्न प्रस्तुत किए गए हैं, जिन्हें निर्णय के आरंभिक पैराग्राफ में सूचीबद्ध किया गया है।

(3) अपीलकर्ताओं/प्रतिवादियों के विद्वान वकील श्री प्रफुल्ल भारत ने निम्नवत प्रस्तुत किया:-

(3.1) वादी ने 26.2.71 (प्रदर्श डी/1) को रघुबर पिता रामूराम और पूरंजन (प्रतिवादी संख्या 1 और 2 का भाई) पिता लीलांबर के साथ मुकदमे की भूमि और अन्य भूमि की बिक्री के लिए एक समझौता किया और उसके बाद उसने 19.4.1971 (प्रदर्श डी/2) को रामूराम को 24.86 एकड़ भूमि बेची और उसी दिन उसने 24.86 एकड़ भूमि बरतराम, अजीतराम और पूरंजन को प्रदर्श डी/4 के अधीन ₹41,500/- के नकद प्रतिफल पर बेची। दोनों बिक्री विलेखों में प्रतिफल की राशि ₹41,500/- थी। प्रदर्श डी/4 में, जो प्रतिवादी सं. 1 और 2 तथा पूरंजन के पक्ष में की गई बिक्री है, स्टाम्प ड्यूटी ₹ 38,500/- अदा की गई तथा पंजीकरण शुल्क ₹ 3000/- लगाया गया, जबकि प्रदर्श डी/2 में स्टाम्प ड्यूटी ₹ 36,200 अदा की गई तथा पंजीकरण शुल्क ₹ 2300/- लगाया गया तथा बिक्री के परिणामस्वरूप सम्पूर्ण भूमि अर्थात् 24.86 एकड़ का कब्जा प्रतिवादी सं. 1 और 2 तथा पूरंजन को सौंप दिया गया। धारा 145 दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन शुरू की गई कार्यवाही में



प्रतिवादियों का कब्जा उप-विभागीय मजिस्ट्रेट द्वारा घोषित किया गया, जिसे पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा भी बरकरार रखा गया है।

(3.2) उन्होंने आगे कहा कि संशोधन के अनुसार वादी द्वारा कोई अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया, जिससे यह साबित हो सके कि मुकदमे की भूमि प्रतिवादी संख्या 1 और 2 तथा पूरंजन के पक्ष में हस्तांतरित नहीं की गई थी और वादी ने उसे दिए गए नोटिस (प्रदर्श पी/5) का भी जवाब नहीं दिया है और कार्रवाई का कारण बनाने के लिए, प्रतिवादियों द्वारा बोई गई फसल को वादी द्वारा काटा गया था, जिसके खिलाफ एफआईआर दर्ज की गई है। उन्होंने यह भी कहा कि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने साक्ष्य की अपनी प्रशंसा को केवल प्रदर्श डी/2 तक सीमित रखा, जो कि रामोराव को की गई बिक्री है, जो कि आक्षेपित बिक्री नहीं है, एक निष्कर्ष दर्ज करके अपील को अनुमति दी, जो कि विकृत और रिकॉर्ड के विपरीत है। उन्होंने अंत में यह दलील दी कि वादी को सुधार के लिए वाद दायर करना आवश्यक था, लेकिन उसने प्रतिवादी संख्या 1 और 2 तथा पूरंजन के पक्ष में बिक्री करने के बाद स्वामित्व की घोषणा के लिए केवल वाद दायर नहीं किया, इसलिए यह विचारणीय नहीं था और प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय और डिक्री को निचली अदालत द्वारा पारित डिक्री को बहाल करके रद्द किया जाना चाहिए और अपील स्वीकार की जानी चाहिए।

(4) श्री राजीव श्रीवास्तव और श्री मलय श्रीवास्तव, प्रतिवादियों/वादी के कानूनी प्रतिनिधियों के विद्वान वकील, ने दलील दी कि खसरा संख्या 273/1, 273/3 और 273/4 वाली वाद भूमि को बिक्री या अन्यथा द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 और 2 तथा पूरंजन को कभी भी हस्तांतरित नहीं किया गया था। यदि प्रतिवादियों को लगता है कि वाद भूमि वादी द्वारा उनके पक्ष में हस्तांतरित की गई थी, तो उन्हें सुधार के लिए वाद दायर करना चाहिए। वादी को सुधार के लिए प्रकरण दायर करने की बाध्यता नहीं थी, यदि कोई हो। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने साक्ष्यों का मूल्यांकन करते हुए अपने क्षेत्राधिकार और अधिकार क्षेत्र के भीतर काम किया और सही निष्कर्ष पर पहुंचा कि वादी ने प्रतिवादी संख्या 1 और 2 तथा एक पूरंजन के पक्ष में मुकदमे की भूमि हस्तांतरित नहीं की है और इसलिए, वादी के पक्ष में सही ढंग से डिक्री दी गई है कि वह मुकदमे की भूमि का शीर्षक धारक है और शीर्षक और कब्जे की घोषणा के लिए डिक्री का हकदार है, जो न तो विकृत है और न ही रिकॉर्ड के विपरीत है और इसलिए, गुरनाम सिंह (डी) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य बनाम लेहना सिंह (डी) द्वारा विधिक प्रतिनिधि 1 के प्रकरण में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के प्रकाश में व्य. प्र. सं. की धारा 100 के अधीन इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है।

(5) मैंने पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील को सुना है, उनके ऊपर दिए गए प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार किया है और रिकॉर्ड को अत्यंत सावधानी से देखा है।

(6) सुविधा के लिए, विधि का दूसरा सारवान प्रश्न पहले निर्धारण के लिए लिया जाता है।

दूसरे सारवान प्रश्न का उत्तर: – यह सारवान प्रश्न दो भागों में है –

(1) क्या प्रतिवादियों द्वारा मौखिक साक्ष्य यह साबित करने के लिए स्वीकार्य था कि बिक्री विलेख



(प्रत्यक्ष पी-4) में वर्णित भूमि भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 92 के प्रावधान (1) के दृष्टिकोण में पक्षों की सामान्य/पारस्परिक भूल के कारण सही ढंग से नहीं बताई गई थी?

(2) क्या विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 26 के अधीन सुधार के लिए वाद की अनुपस्थिति में स्वामित्व और कब्जे की घोषणा के लिए वादी का वाद बनाए रखा जा सकता था या प्रतिवादियों को वादी द्वारा दायर वाद का विरोध करने के लिए बिक्री विलेख (प्रत्यक्ष डी/4) के सुधार के लिए वाद दायर करना आवश्यक था?

(7) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (जिसे आगे "1872 का अधिनियम" कहा जाएगा) की धारा 92 में निम्नलिखित प्रावधान है:-

"धारा 92 – मौखिक समझौते के साक्ष्य का बहिष्करण:-

92. मौखिक करार के साक्ष्य का अपवर्जन- जबकि किसी ऐसी संविदा, अनुदान या सम्पत्ति के अन्य व्ययन के निबन्धनों को, या किसी बात को, जिसके बारे में विधि द्वारा अपेक्षित है कि वह दस्तावेज के रूप में लेखबद्ध की जाए, अंतिम पिछली धारा के अनुसार साबित किया जा चुका हो, तब किसी ऐसी लिखत के पक्षकारों या उनके हित प्रतिनिधियों के बीच के किसी मौखिक करार या कथन का कोई भी साक्ष्य उसके निबन्धनों का खण्डन करने के या उनमें फेरफार करने के या जोड़ने के या उनमें से घटाने के प्रयोजन के लिए ग्रहण

न किया जाएगा :

परन्तुक (1)-ऐसा कोई तथ्य साबित किया जा सकेगा, जो किसी दस्तावेज को अविधिमान्य बना दे या जो किसी व्यक्ति को तत्सम्बन्धी किसी डिक्री या आदेश का हकदार बना दे, यथा कपट, अभिप्रास, अवैधता, सम्यक् निष्पादन का अभाव, किसी संविदाकारी पक्षकार में सामर्थ्य का अभाव, प्रतिफल का [अभाव या निष्फलता] या विधि की या तथ्य की भूल ।

1872 के अधिनियम की धारा 92 के द्वारा, विधानमंडल ने अनुबंध के पक्षों के बीच अनुबंध की शर्तों को बदलने के उद्देश्य से मौखिक साक्ष्य पेश किए जाने पर रोक लगा दी है, जिसका अर्थ है कि जब सभी अनुबंधों या अनुदान या संपत्ति के अन्य निपटान की शर्तें लिखित रूप में कम कर दी जाती हैं, चाहे ऐसे अनुबंध या अनुदान को अनिवार्य रूप से लिखित रूप में कम करने और पंजीकृत करने की आवश्यकता हो या नहीं, तो इसके नियमों का खंडन करने, बदलने, जोड़ने या घटाने के लिए कोई मौखिक साक्ष्य स्वीकार नहीं किया जाएगा।

(8) इस प्रावधान से जुड़ा पहला प्रावधान अधिनियम 1872 की धारा 92 का अपवाद है। इस प्रावधान के आधार पर, अदालत दस्तावेज को देखने से ही स्पष्ट साक्ष्य पर कार्यवाई कर सकती है कि आपसी गलती हुई थी। पक्ष उस समय अपने समवर्ती इरादे के बारे में भी साबित कर सकते हैं दस्तावेज के निष्पादन की और यह उनके समवर्ती इरादे को प्रभावी करने में विफल रहा। इस प्रावधान में विचारित गलतियाँ वास्तविक और आकस्मिक गलतियाँ हैं जैसे संपत्ति का गलत विवरण। यह जानने के लिए साक्ष्य की अनुमति दी जा सकती है कि क्या दस्तावेज के अधीन कोई विशेष भूमि हस्तांतरित की गई थी (रिखीराम प्यारेलाल बनाम घासीराम 2 देखें)।



(9) राजाराम बनाम माणिक और अन्य 3 के प्रकरण में नागपुर उच्च न्यायालय ने माना है कि 1872 के अधिनियम की धारा 92 के प्रावधान (1) के आधार पर, मौखिक साक्ष्य इस प्रकार यह साबित करने के लिए स्वीकार्य है कि अनुबंध की अभिव्यक्ति एक सामान्य गलती के कारण सभी पक्षों के समवर्ती इरादे के विपरीत है। सेन न्यायाधीश ने उचित रूप से निम्नलिखित माना:—

“(9) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 92 के प्रावधान (1) में यह निर्धारित किया गया है कि किसी भी तथ्य को साबित किया जा सकता है जैसे कि तथ्य या कानून में गलती जो किसी व्यक्ति को किसी दस्तावेज़ से संबंधित किसी डिक्री या आदेश का हकदार बनाती है। इस प्रकार मौखिक साक्ष्य यह साबित करने के लिए स्वीकार्य है कि अनुबंध की अभिव्यक्ति एक सामान्य गलती के कारण सभी पक्षों के समवर्ती इरादे के विपरीत है: 'अब्दुल हकीम खान बनाम राम गोपाल', 44 इलाहाबाद 246; 'केशियो सिंह बनाम रुपन सिंह', ए आई आर (14) 1927 इलाहाबाद 355; सुखदेव राय बनाम राम नारायण बाई, ए आई आर (17) 1930 इलाहाबाद 387 कॉलम 1; 'दगडू बनाम भाना', 28 बॉम्बे 420; 'माधवजी वी रामनाथ', 30 बॉम्बे 457; मोहम्मद भोय पुद्दुमसी बनाम चुटरपुट सिंह', 20 कलकत्ता 854; 'महेन्द्र नाथ बनाम. जोगेंद्र नाथ', 2 कलकत्ता डब्ल्यू एन 260; 'असितुल्ला बनाम सदातुल्ला', ए आई आर 1918 (5) कलकत्ता 809; 'बीपिन कृष्णा बनाम जोगेश्वर', ए आई आर (8) 1921 कलकत्ता 730; 'नंदी लाल बनाम जोगेंद्र चंद्र', ए आई आर (10) 1923 कलकत्ता 53; 'के. चाइना मेलय्या बनाम के. वीरैया', ए आई आर (3) 1916 मद्रास 795 कॉलोन 1 'रंगासामी बनाम सोवरी', 39 मद्रास 792 और 'सब हाजी बनाम नवलसिंह', ए आई आर (15) 1928 नागपुर 4. जैसा कि जस्टिस बनर्जी ने 'महेन्द्र नाथ मुखर्जी बनाम जोगेंद्र नाथ रॉय चौधरी' में कहा है। 2 कलकत्ता डब्ल्यू एन 260, पृष्ठ 262 पर, 'पूर्वोक्त' में उद्धृत प्रावधान उपकरणों के सुधार के लिए मुकदमों तक ही सीमित नहीं है। इस प्रकार, दस्तावेज़ में सामान्य गलती के कारण अनुबंध को व्यक्त करने में पक्षों के वास्तविक, असली और समवर्ती इरादे का पता लगाने के लिए मौखिक साक्ष्य स्पष्ट रूप से स्वीकार्य है।

(10) राजाराम (पूर्वोक्त) के प्रकरण में नागपुर उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 92 के प्रावधान (1) और विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1877 की धारा 31 (विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 26 के समरूप) का संयुक्त प्रभाव माना है कि एक प्रतिवादी अनुबंध की अभिव्यक्ति में किसी भी गलती का तर्क दे सकता है और साबित कर सकता है, भले ही उसने सुधार के लिए प्रकरण दायर न किया हो और इस आधार पर मुकदमे का विरोध कर सकता है कि उसे जो बेचा गया था वह दस्तावेज़ में वर्णित से अलग था।

(11) इसी प्रकार, नागपुर उच्च न्यायालय ने बालाप्रसाद आसाराम चरखा एवं अन्य बनाम असमाबी पति फकरुद्दीन बोहरी 4 के प्रकरण में माना है कि विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1877 की धारा 31 (विनिर्दिष्ट



Neutral Citation
2019:CGHC:11214

अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 26 के समरूप) ⁷ और भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 92, परंतुक (1) का संयुक्त प्रभाव अनुबंध करने वाले किसी भी पक्ष को, चाहे वह वादी हो या प्रतिवादी, समझौते की गलत अभिव्यक्ति को साबित करके अपने अधिकार की रक्षा करने का अधिकार देता है। यह निम्नानुसार देखा गया:—

“10. भले ही वादी को बिक्री विलेख के सुधार के लिए प्रकरण करने की आवश्यकता हो, उसका दावा तर्कसंगत है। धारा 31 एक सक्षम प्रावधान है और यह सुधार की राहत प्राप्त करने का एकमात्र उपाय नहीं है। तत्काल प्रकरण में शिकायत में कहा गया है कि सं. 56/1 एक सामान्य गलती के कारण साधन सुराग में लिखा गया था। इसी तरह की परिस्थितियों में यह माना गया था – ‘महादेव अय्यर बनाम गोपाल अय्यर’ 34 मद्रास 51 (सी), कि सुधार के लिए प्रार्थना की चूक, अधिक से अधिक, एक औपचारिक मामला था। यदि धारा 31 की शर्तें संतुष्ट हैं, तो न्यायालय केवल इसके लिए प्रार्थना की चूक के कारण सुधार से इनकार नहीं कर सकता है। इस निर्णय का पालन – ‘रंगास्वामी बनाम सोवरी अय्यंगर ए आई आर 1916 मद्रास 519 (डी) और – ‘सभाजी बनाम नवलसिंह ए आई आर 1923 नागपुर 4(ई)। ‘ए आई आर 1928 नागपुर 4(ई)’ में पार्टियों का इरादा सर्वे नंबर 181 को बेचना था, लेकिन आपसी गलती से इसे सर्वे नंबर 161 के रूप में दिखाया गया, किन-खेड़े ए.जे.सी. ने माना कि धारा 31, विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम और धारा 92, प्रावधान (1), साक्ष्य अधिनियम का संयुक्त प्रभाव किसी भी अनुबंध के पक्षकार को, चाहे वादी हो या प्रतिवादी, समझौते की गलत अभिव्यक्ति को साबित करके अपने अधिकार की रक्षा करने का अधिकार देता है। प्रकरण 3 साल के भीतर लाया गया था। वर्तमान प्रकरण में, प्रकरण प्रदर्श पी-1 के निष्पादन के तीन साल के भीतर लाया गया था और सुधार के लिए प्रकरण समय के भीतर है। इसलिए वादी आपसी गलती के दृष्टिकोण में इस धारा के अधीन राहत के हकदार होंगे।

(12) मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने तुलसीराम बनाम दुर्गा प्रसाद 5 के प्रकरण में राजाराम (पूर्वोक्त), बालाप्रसाद (पूर्वोक्त) और रिखीराम (पूर्वोक्त) पर भरोसा करते हुए माना है कि बिक्री विलेख में खसरा नंबर के संबंध में आपसी गलती को मौखिक साक्ष्य पेश करके बदला जा सकता है। इस प्रकार मौखिक साक्ष्य एक रिक्त स्थान को भरने के लिए स्वीकार्य है जो दस्तावेज़ में सामान्य गलती से छोड़ दिया गया है।

(13) अगले प्रश्न की ओर मुड़ते हुए, क्या प्रतिवादी वादी द्वारा अपने बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-2) को 1963 के अधिनियम की धारा 26 के अधीन सुधारे बिना शीर्षक और कब्जे की घोषणा के लिए लाए गए मुकदमे का विरोध करने का हकदार है। किसी उपकरण का सुधार पक्षों के बीच पूर्व वास्तविक समझौते के अनुरूप लाने में शामिल है। 1963 के अधिनियम की धारा 26 में निम्नानुसार कहा गया है:—

“धारा 26 – उपकरण को कब सुधारा जा सकता है:—

(1) जब, पक्षकारों के बीच, लिखित रूप में कोई अनुबंध या अन्य लिखत (जो किसी कंपनी के एसोसिएशन के लेख नहीं हैं, जिस पर कंपनी अधिनियम, 1956 लागू होता है) उनके वास्तविक



इरादे को व्यक्त नहीं करता है, तो-

- (क) कोई भी पक्ष या उसके हित में प्रतिनिधि लिखत को सुधारने के लिए प्रकरण कर सकता है; या
- (ख) वादी, किसी भी ऐसे मुकदमे में जिसमें लिखत के अधीन उत्पन्न होने वाला कोई अधिकार विवाद्यक में है, अपनी दलील में दावा कर सकता है कि लिखत को सुधारा जाए; या
- (ग) खंड (ख) में निर्दिष्ट किसी भी ऐसे मुकदमे में प्रतिवादी, उसके लिए खुले किसी अन्य बचाव के अलावा, लिखत के सुधार के लिए कह सकता है।

(2) यदि किसी ऐसे वाद में, जिसमें किसी संविदा या अन्य लिखत को उपधारा (1) के अधीन परिशोधित करने की मांग की गई हो, न्यायालय पाता है कि वह लिखत, कपट या भूल के कारण, पक्षकारों के वास्तविक आशय को अभिव्यक्त नहीं करती है, तो न्यायालय अपने विवेकानुसार, उस लिखत को इस प्रकार परिशोधित करने का निर्देश दे सकता है कि वह आशय अभिव्यक्त हो जाए, जहां तक ऐसा तीसरे पक्षकारों द्वारा सद्भावनापूर्वक और मूल्य के लिए अर्जित अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना किया जा सके।

(3) लिखित अनुबंध को पहले संशोधित किया जा सकता है, और फिर यदि संशोधन का दावा करने वाले पक्ष ने अपनी दलील में ऐसा अनुरोध किया है और न्यायालय उचित समझे, तो उसे विशेष रूप से लागू किया जा सकता है। (4) इस धारा के अंतर्गत किसी भी पक्ष को किसी लिखत के संशोधन के लिए तब तक कोई राहत नहीं दी जाएगी जब तक कि यह विशेष रूप से दावा न किया गया हो: बशर्ते कि जहां किसी पक्ष ने अपनी दलील में ऐसी किसी राहत का दावा नहीं किया है, वहां न्यायालय कार्यवाही के किसी भी चरण में उसे ऐसे दावे को शामिल करने के लिए न्यायसंगत शर्तों पर दलील को संशोधित करने की अनुमति देगा।

(14) विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 26 को लागू करने के लिए यह साबित करना आवश्यक है:-

- (1) कि विक्रय विलेख सही मायने में पक्षकारों की मंशा को व्यक्त नहीं करता है,
- (2) कि यह दस्तावेज तैयार करने में आपसी गलती के कारण है, न्यायालय को न केवल यह स्पष्ट रूप से साबित करना है कि दस्तावेज तैयार करने में धोखाधड़ी या गलती हुई है, बल्कि इसे निष्पादित करने में पक्षकारों की वास्तविक मंशा का भी पता लगाना है।

(15) किसी विलेख की व्याख्या करते समय दो सिद्धांतों को ध्यान में रखना चाहिए। न्यायालयों को विलेख या परोल द्वारा समझौते की व्याख्या करने के लिए बाध्य किया जाता है। "यूट्रेस मैगिस वैलेट क्वाम पेरेट" (ताकि इसे पर्याप्त होने के बजाय संचालित किया जा सके)। हरिहर बनर्जी बनाम रामशशि रॉय 6 में, यह माना गया कि



Neutral Citation
2019:CGHC:11214

विलेखों की व्याख्या उनमें दोष खोजने की इच्छा से नहीं की जाती है जो उन्हें दोषपूर्ण बनाती है, बल्कि उन्हें प्रभावी बनाने के लिए व्याख्या की जानी चाहिए।

(16) अन्य कहावत है “फाल्सो डेमोन्स्ट्रैटियो नॉन नोसेफ” यदि वस्तु के बारे में पर्याप्त निश्चितता हो तो केवल गलत वर्णन से कोई दोष नहीं निकलता।

(17) राजाराम (पूर्वोक्त) के प्रकरण में नागपुर उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से सिद्धांत निर्धारित किया है जिसके आधार पर न्यायालय को सुधार प्रदान करते समय कार्य करना होता है। यह निम्नानुसार माना गया:—

“8. सुधार के लिए आदेश जारी करने से पहले न्यायालय को जिन सिद्धांतों पर कार्य करना होता है, वे लॉर्ड चेम्सफोर्ड, लॉर्ड चांसलर के फैसले से निम्नलिखित अंश में बताए गए हैं, ‘फाउलर बनाम फाउलर’, 1859 4 डी ई जी एंड जे 250:45 ई आर 97:

“न्यायालय के पास लिखित समझौतों को सुधारने की शक्ति है, जहां पार्टियों के इरादे के विपरीत और आपसी गलती के अधीन शर्तों की चूक या प्रविष्टि हुई है, जिसका अक्सर और सबसे उपयोगी रूप से प्रयोग किया गया है। लेकिन यह एक ऐसा भी है जिसका उपयोग अत्यधिक सावधानी और सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए। पार्टियों द्वारा जानबूझकर हस्ताक्षरित किसी समझौते के स्थान पर एक नया समझौता करने की अनुमति केवल स्पष्ट और सबसे संतोषजनक विवरण के एक अलग इरादे के सबूत पर ही दी जानी चाहिए। इस विषय पर लॉर्ड थुरलो की भाषा बहुत मजबूत है; वे कहते हैं, जो साक्ष्य यह साबित करते हैं कि लिखित रूप में लिखे गए शब्द सभी पक्षों की सहवर्ती मंशा के विपरीत थे, वे मजबूत, अपरिवर्तनीय साक्ष्य होने चाहिए: ‘लेडी शेलबर्न बनाम लॉर्ड इंचिक्विन’, (1784) 1 बीसीसी 338 पृष्ठ 341 पर। और लॉर्ड थुरलो की इस अभिव्यक्ति का उल्लेख लॉर्ड एल्डन ने ‘मार्किस ऑफ टाउनशेंड बनाम स्टेंगलूम’, (1801) 6 वेस 323 पृष्ठ 334 पर, बिना किसी अस्वीकृति के किया है। यद्यपि अगर लॉर्ड थुरलो ने ‘अपरिवर्तनीय’ शब्द का इस्तेमाल इसके सामान्य अर्थ में, ऐसे साक्ष्य का वर्णन करने के लिए किया है जिसका खंडन या खंडन नहीं किया जा सकता है, तो उनकी भाषा को कुछ योग्यता की आवश्यकता होगी; लेकिन यह संभव है कि उनका मतलब केवल यह था कि गलती को उच्चतम संभावना से अधिक किसी चीज से साबित किया जाना चाहिए और यह ऐसा होना चाहिए कि मन में कोई उचित और तर्कसंगत संदेह न रहे कि विलेख पक्षों के अंतिम इरादे को मूर्त रूप नहीं देता है। यह स्पष्ट है कि जो व्यक्ति गलती के आधार पर विलेख को सुधारने का प्रयास करता है, उसे सबसे स्पष्ट और सबसे संतोषजनक तरीके से यह स्थापित करने की आवश्यकता होगी कि जिस कथित इरादे के अनुरूप वह इसे बनाना चाहता है, वह इसके निष्पादन के समय तक सभी पक्षों के दिमाग में एक साथ जारी रहा, और यह भी दिखाने में सक्षम होना चाहिए कि विलेख को किस रूप में लाया जाना चाहिए। क्योंकि किसी दस्तावेज को अलग करने और गलती के आधार पर इसे सुधारने के बीच एक भौतिक अंतर है। बाद के प्रकरण में आप केवल उन सभी पक्षों के





पारस्परिक और समवर्ती इरादे पर कार्य कर सकते हैं जिनके लिए न्यायालय वस्तुतः एक नया लिखित समझौता कर रहा है।

(18) राजाराम (पूर्वोक्त) में, नागपुर उच्च न्यायालय ने यह भी माना कि जब गलती साबित हो जाती है, तो विलेख को इस तरह से समझा जा सकता है जैसे कि एसआर अधिनियम 1877 की धारा 31 (अब एसआर अधिनियम 1963 की धारा 26) के उद्देश्य से लाए गए मुकदमे में गलती को सुधारा गया हो, जो तीसरे पक्ष के अधिकारों के अधीन है। यह भी माना गया कि बिक्री विलेख को सुधारने में विफलता उस संपत्ति के स्वामित्व को समाप्त नहीं करती है जिसे वास्तव में बेचा गया था, लेकिन गलती के कारण बिक्री विलेख में इसका उचित वर्णन नहीं किया गया था। यह निम्नानुसार देखा गया:—

“18. जब कोई गलती स्थापित हो जाती है, तो विलेख को इस प्रकार समझा जा सकता है जैसे कि विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 31 के अधीन इस उद्देश्य के लिए लाए गए मुकदमे में गलती को सुधारा गया था, इस शर्त के अधीन कि सद्भावना और मूल्य के लिए अर्जित तीसरे पक्ष के अधिकारों को इससे कोई नुकसान नहीं होना चाहिए: देखें 'कोटा चिना मेलय्या बनाम कन्नेकांति वीरैया', ए आई आर (3) 1916 मद्रास 795 कॉलम 1; 'महादेव अय्यर बनाम गोपाल अय्यर', 34 मद्रास 51; 'तेताली सोरम्मा बनाम कोव्वुरी वेंकैया', ए आई आर (25) 1938 मद्रास 589; 'महेन्द्र नाथ मुखर्जी बनाम जोगेंद्र नाथ रॉय चौधरी', 2 कलकत्ता डब्ल्यू एन 260; 'असीतुल्ला बनाम सदातुल्ला', ए आई आर (5) 1918 कलकत्ता 809; 'नंदी लाल अग्रानी बनाम जोगेंद्र चंद्र दत्ता', ए आई आर (10) 1923 कलकत्ता 53 पृष्ठ 56 पर और 'सभाजी बनाम नवलसिंह', ए आई आर (15) 1928 नागपुर 4. जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, किसी तीसरे पक्ष ने दोनों क्षेत्रों में से किसी में भी कोई हित अर्जित नहीं किया है और परिणामस्वरूप पक्षपात का कोई सवाल ही नहीं है और ऊपर बताए गए सिद्धांत के आवेदन पर कोई रोक नहीं है।

19. विलेख को सुधारने में विफलता उस संपत्ति के स्वामित्व को समाप्त नहीं करती है जिसे वास्तव में बेचा गया था लेकिन गलती के कारण बिक्री-विलेख में ठीक से वर्णित नहीं किया गया था: 'केशियो सिंह बनाम रूपन सिंह', ए आई आर (14) 1927 इलाहाबाद 355 देखें; 'सुखदेव राय वि. राम नारायण राय', ए आई आर 1930 (17) इलाहाबाद 387 कॉलम 1; 'महेन्द्र नाथ मुखर्जी बनाम जोगेंद्र नाथ रॉय चौधरी', 2 कलकत्ता डब्ल्यू एन 260; 'असितुल्ला बनाम सदातुल्ला', ए आई आर (5) 1918 कलकत्ता 809; 'नंदी लाल अग्रानी बनाम जोगेंद्र चंद्र दत्ता', ए आई आर (10) 1923 कलकत्ता 53 पी पर। 56; 'लाधा सिंह बनाम मुंशीराम', ए आई आर (14) 1927 कलकत्ता 605; 'लक्ष्मी नारायण बनाम माउंट मोहम्मदी बेगम', 7 लखनऊ 454 और 'बरसाती बनाम सरजू प्रसाद', 14 लखनऊ 308 बजे पी. 315. कुछ मामलों में, यह माना गया कि समय बीत जाने के कारण गलती के आधार पर राहत देने में कोई बाधा नहीं है: देखें 'महेन्द्र नाथ बनाम जोगेंद्र नाथ', 2 कलकत्ता डब्ल्यू एन 260; 'असीतुल्ला बनाम सदातुलाल', ए



आई आर (5) 1918 कलकत्ता 809; 'सुखदेव राय बनाम राम नारायण राय', ए आई आर (17) 1930 इलाहाबाद 387 कॉलम 1; 'मिनालाल शादीराम बनाम खरसेटजी', 30 बॉम्बे 395; 'तेताली सोरम्मा बनाम कोव्वुरी वेंकैया', ए आई आर (25) 1938 मद्रास 589 और 'बरसाती बनाम सरजू प्रसाद', 14 लखनऊ 308। 'लक्ष्मी नारायण बनाम माउंट मोहम्मदी बेगम', 7 लखनऊ 454 और बरसाती बनाम सरजू प्रसाद', 14 लखनऊ 308, 'पूर्वोक्त' में उद्धृत किया गया था कि विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 31 एक सक्षम धारा है और इसलिए यह तथ्य कि वादी ने धारा का लाभ उठाने का विकल्प नहीं चुना, उसे उन अधिकारों से वंचित नहीं कर सकता जो उसने बिक्री-पत्र के अधीन हासिल किए थे। यही सिद्धांत एक प्रतिवादी के प्रकरण में भी लागू होता है जो इस आधार पर मुकदमे का सफलतापूर्वक विरोध कर सकता है कि उसके बिक्री-पत्र में संपत्ति का गलत वर्णन किया गया था, हालांकि उसने सुधार के लिए कोई प्रकरण दायर नहीं किया था। इसलिए दूसरा आधार विफल हो जाता है।

(19) इस प्रकार, यह अच्छी तरह से स्थापित है कि प्रतिवादी इस आधार पर मुकदमे का विरोध करने का हकदार है कि मुकदमे की संपत्ति को बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-4) में गलत तरीके से वर्णित किया गया था, बिना धारा 26 के अधीन सुधार के लिए कोई प्रकरण दायर किए 1963 का अधिनियम और वादी सुधार के लिए प्रकरण दायर किए बिना भी शीर्षक की घोषणा के लिए प्रकरण चला सकता है। इस प्रकार, इस महत्वपूर्ण कानून के प्रश्न का उत्तर तदनुसार दिया गया है।

महत्वपूर्ण कानून के प्रश्न 1 का उत्तर: -

(20) वादी द्वारा स्वामित्व की घोषणा के लिए तत्काल वाद दायर किया गया था कि वह वाद भूमि का शीर्षक धारक है और कब्जे की वसूली भी मांगी, जिसे विचारण न्यायालय ने यह कहते हुए निरस्त कर दिया कि वादी ने खसरा संख्या 273/1, 273/3 और 273/4, कुल क्षेत्रफल 6.60 एकड़ वाली वाद भूमि भी प्रतिवादी संख्या 1 और 2 और उनके भाई पूरनजन को प्रदर्श डी-4 के अधीन 19.04.1971 को बेच दी है और बिक्री के तुरंत बाद 24.86 एकड़ भूमि के साथ वाद भूमि का शांतिपूर्ण कब्जा उसे दे दिया और आगे माना कि टाइपोग्राफिकल गलती के कारण खसरा संख्या 273 की 6.60 एकड़ भूमि का उल्लेख बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-2) तैयार करते समय नहीं किया गया था। विचारण न्यायालय ने यह भी माना कि वादी ने रघुबर और पुरंजन नामक व्यक्ति के साथ 54.80 एकड़ जमीन बेचने के लिए समझौता किया था, जिसमें प्रकरण वाली जमीन भी शामिल थी और 5,300 रुपये की अग्रिम राशि प्राप्त की थी। वादी द्वारा अपील किए जाने पर, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपील को स्वीकार कर लिया और विचारण न्यायालय के फैसले और डिक्री को रद्द कर दिया और अपील में मुकदमे का फैसला सुनाया, जिसमें कहा गया कि मुकदमे वाली जमीन वादी-महादेव द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 और 2 के पक्ष में बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-4) द्वारा हस्तांतरित नहीं की गई थी और मुकदमे वाली जमीन उक्त बिक्री विलेख में शामिल नहीं थी।



(21) विचारणीय प्रश्न यह होगा कि क्या प्रतिवादियों ने सफलतापूर्वक यह साबित कर दिया है कि यह पक्षों की आपसी भूल थी कि विचाराधीन बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-4) में पक्षों की मंशा सही रूप से व्यक्त नहीं की गई थी और विलेख अर्थात् बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-4) तैयार करते समय गलती हुई थी और विलेख निष्पादित करते समय पक्षों की मंशा वाद भूमि को शामिल करने की क्या थी या विलेख तैयार करते समय उसे भूल से छोड़ दिया गया था।

(22) वादी ने स्वामित्व की घोषणा और कब्जे की वसूली के लिए प्रकरण दायर किया कि वह वाद भूमि का स्वामित्व धारक है और वर्ष 1981 में उसने वाद भूमि पर फसल बोई थी, लेकिन प्रतिवादियों ने उसे खड़ी फसल काटने की धमकी दी, जिसके लिए उसने 28.10.1981 को प्रतिवादियों को कानूनी नोटिस दिया, लेकिन प्रतिवादियों ने खुद को सुधारने के बजाय 07.11.1981 को उसके खिलाफ एफआईआर दर्ज की और फसलों की कटाई की और जबरन वाद भूमि पर कब्जा कर लिया, इस प्रकार वह स्वामित्व और कब्जे की घोषणा के लिए हकदार है। प्रतिवादियों ने एक दलील पेश की कि वे बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-4) के अनुसार वाद भूमि के स्वामित्व धारक हैं, जिसमें वाद भूमि भी शामिल है और वाद भूमि के खाते के साथ कब्जा भी उन्हें दिया गया था। आगे दलील दी गई कि संशोधन पंजी (प्रदर्श डी-7) में संबंधित राजस्व अधिकारी ने म्यूटेशन करते समय मुकदमे की भूमि का कुल क्षेत्रफल 18.26 एकड़ दर्शाया है और उक्त प्रविष्टि का लाभ उठाते हुए वादी ने प्रतिवादियों के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन कार्यवाही शुरू की, जिसमें विद्वान उप-विभागीय मजिस्ट्रेट ने केस संख्या 30/1975 में घोषित किया कि प्रतिवादी मुकदमे की भूमि पर काबिज हैं और उस आदेश की पुष्टि दंड प्रक्रिया संहिता संख्या 51/1976 में अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा 01.03.1976 को की गई, जिसमें माना गया कि प्रतिवादी मुकदमे की भूमि पर काबिज हैं।

(23) इस प्रकार, ऐसा प्रतीत होता है कि वादी ने मूल शिकायत में यह भी नहीं कहा कि उसने प्रतिवादी संख्या 1 व 2 तथा एक पुरंजन के पक्ष में प्रदर्श डी-4 द्वारा वाद भूमि नहीं बेची है और केवल जब प्रतिवादियों ने प्रथम अपीलीय न्यायालय में विचारण न्यायालय की अनुमति से संशोधन डाला कि वादी को विचारण न्यायालय के दिनांक 08.07.1999 के आदेश के अनुसरण में बिक्री विलेख को सुधारने का निर्देश दिया जाए, तभी वादी ने 12.11.1999 को शिकायत में संशोधन किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा गया कि वाद भूमि कभी भी प्रतिवादी संख्या 1 व 2 तथा एक पुरंजन के पक्ष में प्रदर्श डी-4 द्वारा हस्तांतरित नहीं की गई, क्योंकि बिक्री विलेख में वाद भूमि को शामिल नहीं किया गया है और वाद सीमा अवधि द्वारा वर्जित है, जिसे प्रथम अपीलीय न्यायालय ने स्वीकार कर लिया है और वादी के पक्ष में डिक्री प्रदान की है।

(24) अभिलेख पर लाए गए मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों का गहनता से अवलोकन करने पर अभिलेख पर निम्नलिखित तथ्य सामने आए:-

24.1. वादी ने रघुबर एवं पुरंजन नामक व्यक्ति से 54.80 एकड़ भूमि को प्रदर्श पी-1 के अधीन 85,000/- रुपये नकद पर बेचने का समझौता किया तथा 5,000/- रुपये अग्रिम प्राप्त किए,



जैसा कि वादी ने स्वयं अपने जिरह के पैरा 7 में स्वीकार किया है, लेकिन चूंकि उसकी बहन की भूमि भी इस कुल क्षेत्रफल में शामिल थी, इसलिए उसने अपनी भूमि में से केवल 49.80 एकड़ भूमि प्रतिवादी संख्या 1 एवं 2 तथा अपने भाई पुरंजन को तथा अपनी बहन की भूमि को छोड़कर रामोराव नामक व्यक्ति को बेचने का निर्णय लिया।

24.2. दिनांक 19.04.1971 को दो बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-2 और प्रदर्श डी-4) रामोराव के पक्ष में और प्रतिवादी संख्या 1 और 2 और उसके भाई पुरंजन के पक्ष में ₹ 41,500/- की प्रतिफल राशि के लिए निष्पादित किए गए थे, जिनमें से प्रत्येक को क्रमशः कुल 24.86 और 24.86 एकड़ भूमि वादी द्वारा दो गवाहों क्रमशः पंचराम और तारूसिंह पटेल की उपस्थिति में हस्तांतरित की गई थी।

24.3. विक्रय विलेख (प्रदर्श डी-2) में, जिसे वादी द्वारा रामोराव के पक्ष में निष्पादित किया गया था, विक्रय विलेख को टाइप करते समय 6.60 एकड़ भूमि को छोड़ दिया गया था और टाइप नहीं किया गया था, लेकिन बाद में इसे हाथ से डाला गया था और वादी महादेव द्वारा इस पर हस्ताक्षर किए गए थे, लेकिन विक्रय विलेख (प्रदर्श डी-4) में यद्यपि भूमि का कुल क्षेत्रफल 24.86 एकड़ दर्शाया गया है, लेकिन कुल मिलाकर यह 18.86 एकड़ भूमि बनती है।

25.4. इस बिक्री के अनुसरण में दाखिल निरस्त प्रतिवादियों के पक्ष में दिनांक 09.04.1973/23.04.1973 (प्रदर्श पी-7) को संबंधित राजस्व अधिकारी द्वारा वादी सहित पक्षों की उपस्थिति में किया गया था, लेकिन उन्होंने प्रतिवादियों के पक्ष में मुकदमे की भूमि के दाखिल निरस्त के तथ्य पर कोई आपत्ति नहीं की और प्रतिवादियों के नामों को राजस्व अभिलेखों में दाखिल निरस्त करने की अनुमति दी और इस प्रकार वादी का खाता बंद कर दिया गया।

24.5. वादी द्वारा उनके पक्ष में की गई बिक्री के तुरंत बाद 24.86 एकड़ की पूरी वाद भूमि का कब्जा प्रतिवादी संख्या 1 और 2 तथा पुरंजन को सौंप दिया गया था और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन शुरू की गई कार्यवाही में विद्वान उप-विभागीय मजिस्ट्रेट ने यह निष्कर्ष दर्ज किया कि प्रतिवादी खरीद की तारीख से ही वाद भूमि पर काबिज हैं और विद्वान सत्र न्यायाधीश ने 1.3.1976 के पुनरीक्षण में इस निष्कर्ष को बरकरार रखा और कहा कि प्रतिवादी बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-4) के अनुसार वाद भूमि पर काबिज हैं।

24.6. चूंकि वादी ने अपनी पूरी जमीन यानी 24.86 एकड़ प्रतिवादियों को प्रदर्श डी-4 के अधीन और 24.86 एकड़ रामोराव को प्रदर्श डी-2 के अधीन बेच दी थी और इस प्रकार, उसने अपनी राजस्व खाते या खाते में मौजूद पूरी जमीन बेच दी और राजस्व अधिकारी ने इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए और यह पाते हुए कि उसके खाते में कोई जमीन नहीं है, प्रदर्श डी-7 में दर्ज उसके खाते को विधिवत बंद कर दिया, लेकिन वादी ने प्रदर्श डी-7 में राजस्व अधिकारी द्वारा दिए गए नोट का लाभ उठाते हुए कि प्रदर्श डी-4 में उल्लिखित प्रतिवादियों को बेची गई जमीन का कुल क्षेत्रफल 18.26 है, राजस्व रिकॉर्ड में अपने नाम 6.60 एकड़ की सीमा तक दर्ज



करवा लिया और उक्त जमीन के लिए एक नया खाता जारी करवा लिया, जो कि मुकदमे की जमीन है।

(25) उपरोक्त दर्ज तथ्यों से स्पष्ट रूप से यह स्थापित होता है कि वादी-महादेव ने सबसे पहले अपनी पूरी जमीन रघुबर और प्रतिवादी नंबर 1 और 2 तथा उसके भाई-पूरनजन को बेचने के लिए सहमति व्यक्त की और तदनुसार, 19.04.1971 को 24.86 एकड़ जमीन को अलग करने के लिए दो बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-2 और प्रदर्श डी-4) निष्पादित किए, जिनमें से प्रत्येक को ₹ 41,500/- का प्रतिफल मिला और उसके स्वामित्व वाली जमीनों पर शांतिपूर्ण कब्जा दिया और उसके बाद प्रतिवादियों ने वादी (प्रदर्श डी-7) की उपस्थिति में राजस्व अभिलेखों में अपने नाम दर्ज करवाए, जिसमें राजस्व अधिकारी ने एक नोट किया कि प्रतिवादियों द्वारा खरीदी गई जमीनों का कुल क्षेत्रफल 18.46 एकड़ है और उसके बाद वादी ने नए खाते जारी करके 6.60 एकड़ जमीन को अपने नाम पर फिर से दर्ज करवा लिया और प्रतिवादियों के कब्जे में हस्तक्षेप करने की कोशिश की, जिसके लिए प्रतिवादियों ने वादी। इतना ही नहीं, वादी ने प्रतिवादियों के खिलाफ धारा 145 दंड प्रक्रिया संहिता की कार्यवाही शुरू की, जिसमें सक्षम मजिस्ट्रेट ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रतिवादियों के पास मुकदमे की भूमि का कब्जा है, जिसकी पुनरीक्षण में पुष्टि की गई, इस प्रकार, प्रतिवादियों का मुकदमे की भूमि पर कब्जा मुकदमे की भूमि की खरीद की तारीख से स्थापित है। ऐसा प्रतीत होता है कि वादी ने बिक्री के लिए सहमति व्यक्त की और उसके बाद प्रतिवादी संख्या 1 और 2 तथा उसके भाई - पूरनजन को कुल वाद भूमि अर्थात 24.86 एकड़ बेच दी, लेकिन बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-4) तैयार करते समय यद्यपि विचारणीय राशि और क्षेत्रफल सहित सभी औपचारिकताओं को पूरा करते हुए 24.86 एकड़ भूमि तैयार की गई थी, लेकिन वास्तव में जो बेचा गया, वह वाद भूमि खसरा संख्या 273/1, 273/3 और 273/4 क्षेत्रफल 6.60 एकड़ को कानून द्वारा बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-4) में शामिल करने से छूट गया, जिसे रामोराम (प्रदर्श डी-2) के प्रकरण में तत्काल सुधारा गया, लेकिन प्रतिवादियों के प्रकरण में इसे ध्यान में नहीं लाया जा सका और सुधारा नहीं जा सका, इस प्रकार यह बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-4) तैयार करने में पक्षों की आपसी गलती का मामला है क्योंकि बिक्री विलेख के रूप में अनुबंध में वास्तव में इरादे को व्यक्त नहीं किया गया था। पक्षकारों का वास्तविक इरादा प्रतिवादी सं. 1 और 2 तथा उसके भाई - पूरनजन के पक्ष में दस्तावेज/बिक्री विलेख (प्रदर्श डी-4) निष्पादित करते समय मुकदमे की भूमि सहित पूरी 24.86 एकड़ भूमि हस्तांतरित करना था और इस प्रकार बिक्री विलेख तैयार करते समय एक मात्र मुद्रण त्रुटि हो गई, मुकदमे की भूमि का स्वामित्व जो पहले से ही प्रतिवादी सं. 1 और 2 को दिया जा चुका था, पूरनजन के साथ वादी को राजस्व प्रविष्टि करने और उसके पक्ष में नया खाता जारी करने के आधार पर वापस नहीं किया जाएगा। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने प्रदर्श डी-2 अर्थात वादी द्वारा रामोराम के पक्ष में निष्पादित बिक्री विलेख की पुष्टि करने वाले साक्ष्य की सराहना करके खुद को गलत दिशा में ले लिया और इस प्रकार विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री को निरस्त कर दिया जो उचित है।



Neutral Citation
2019:CGHC:11214

15

(26) उपर्युक्त विधिक विश्लेषण के दृष्टिकोण में प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय और डिक्री विकृत और अवैध है, जिसे निरस्त किया जाना चाहिए और विचारण न्यायालय का निर्णय बहाल किया जाता है, जिससे वादी का प्रकरण निरस्त हो जाता है। विधि के महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर तदनुसार दिया जाता है।

(27) द्वितीय अपील को उपरोक्त सीमा तक स्वीकार किया जाता है। व्यय के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं दिया गया है।

(28) तदनुसार डिक्री तैयार की जाए।

सही/-

(संजय के. अग्रवाल)

न्यायाधीश

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।